टेरीजा मे का इस्तीफा असमंजस में ब्रिटेन

© The New York Times 2019

ब्रेग्जिट पर संसद में सहमति न बनने और अपनी ही पार्टी के कुछ सांसदों के विरोध को देखते हुए ब्रिटिश प्रधानमंत्री टेरीजा मे को इस्तीफा देना पड़ा। इसके बावजूद ब्रेग्जिट पर सहमति बनने की उम्मीद फिलहाल नहीं दिखाई देती। नए प्रधानमंत्री को संसद में तो चुनौती मिलेगी ही, विभाजित कंजरवेटिव पार्टी को एकजुट करना भी आसान नहीं होगा।

पिछले करीब तीन साल तक ब्रिटेन को यूरोपीय संघ से बाहर निकालने में विफल रहने के बाद टेरीजा मे ने आखिरकार इस्तीफा दे दिया। उनके इस्तीफे के बाद ब्रिटेन न केवल अनिश्चय में फंस गया है, बल्कि कंजरवेटिव पार्टी के सांसदों में उनकी जगह लेने के लिए होड़ मच गई है। मे ने पहले ही स्वीकार कर लिया था कि ब्रेग्जिट की प्रक्रिया पूरी करने और दिशा-निर्देश देने के लिए एक नए नेता की जरूरत है। साथ में उन्होंने चेतावनी भी दी थी कि जिन सांसदों ने अपने कट्टरवादी रुख के जरिये उन्हें जरूरी कदम नहीं उठाने दिया, उन्हें अब बदलने की जरूरत है। 'अगले नेता को ब्रेग्जिट के मामले में सफल होने के लिए संसद में सर्वानुमति बनाने की जरूरत पड़ेगी, जिसमें मैं विफल रही। ऐसी सर्वानुमति तभी स्थापित होगी, जब अलग-अलग विचार रखने वाले सांसद समझौते की इच्छा रखते हों,' मे ने कहा था।

ब्रिटेन की ध्रुवीकृत राजनीति में ऐसा समझौता संभव है या नहीं, यह कहना फिलहाल कठिन है। 23 जून, 2016 को हुए जनमत सर्वेक्षण के बाद से, जिसमें ब्रिटेन को यूरोपीय संघ से बाहर करने वाले मामूली मतों से आगे रहे थे, ब्रेग्जिट ने सत्तारूढ़ कंजरवेटिव और विपक्षी लेबर पार्टी, दोनों को बुरी तरह विभाजित कर दिया है। जबकि ब्रिटेन को यूरोपीय संघ में ही बरकरार रखने वाले किसी दूसरे जनमत सर्वेक्षण की दूर-दूर तक संभावना नहीं है। लेकिन मे के लंबे विवादास्पद कार्यकाल में अनेक कंजरवेटिव सांसदों ने कट्टरवादी रुख अख्तियार किया, और अब वे ब्रिटेन के यूरोपीय संघ से बाहर होने के पक्ष में हैं, जबकि संसद में बहुमत सदस्यों ने ब्रेग्जिट का विरोध किया। अनेक विशेषज्ञों का मानना है कि यूरोपीय संघ से बाहर होने का ब्रिटेन को भारी आर्थिक नुकसान भुगतना पड़ेगा।

मे की विदाई के बाद, जिसका इंतजार उनकी अपनी पार्टी के अनेक सांसदों को भी था, गर्मी के इस मौसम में ब्रिटेन का राजनीतिक माहौल भी गर्म हो गया है। हालांकि नया प्रधानमंत्री चुने जाने तक मे यह जिम्मेदारी संभालती रहेंगी। जब तक नया नेता नहीं चुना जाता, तब तक ब्रेग्जिट की प्रक्रिया भी लंबित रहेगी।

ब्रिटेन को कायदे से विगत 29 मार्च तक यूरोपीय संघ से निकल जाना था। लेकिन

विद्ड्रॉल एग्रीमेंट को, जिस पर मे यूरोपीय संघ से बातचीत कर रही थीं, ब्रिटिश संसद द्वारा तीन बार खारिज कर दिए जाने के बाद ब्रेग्जिट की समयसीमा बढ़ाकर 31 अक्तूबर कर दी गई है। पूर्व विदेश सचिव और ब्रेग्जिट के घनघोर पक्षधर बोरिस जॉनसन प्रधानमंत्री पद की दौड़ में सबसे आगे हैं। पिछले दिनों एक आर्थिक सम्मेलन में उन्होंने विश्वास के साथ कहा था, 'डील हो या नहीं हो, हम आगामी 31 अक्तूबर तक यूरोपीय संघ से बाहर निकल जाएंगे।'

दूसरी ओर विपक्षी लेबर पार्टी टेरीजा मे के इस्तीफे का जश्न मना रही है। लेबर पार्टी की नेता जेरेमी कोर्बिन, जिनकी हाउस ऑफ कॉमन्स में मे से लगातार भिड़ंत हुई, कहती हैं,' मे का इस्तीफा इस बात का सुबूत है कि ब्रिटेन के यूरोपीय संघ में रहने-न रहने के बारे में सत्तारूढ़ कंजरवेटिव पार्टी लंबे समय से किस तरह बंटी हुई थी। मे ने आखिरकार उस सच को स्वीकार कर लिया है, जो पूरा देश पिछले कई महीनों से जानता था। वह यह कि मे न देश चला सकती हैं और न ही बुरी तरह विभाजित अपनी पार्टी का नेतृत्व कर सकती हैं।' तुलनात्मक रूप से मे की अपनी पार्टी के सांसद ज्यादा उदार हैं, बावजूद इसके कि उनमें से कइयों ने महीनों से उन्हें प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए गोपनीय योजनाएं बनाईं और कई अब उनकी जगह लेने की कोशिश में भी हैं। मे की सरकार पूरी तरह विभाजित रही और उनके प्रधानमंत्री काल में करीब तीन दर्जन मंत्रियों ने अपने इस्तीफे सौंपे। थोड़े दिनों पहले मे द्वारा ब्रेग्जिट से संबंधित नई योजना जारी करने के विरोध में इस्तीफा देने वाली एंड्रिया लीडसम कहती हैं कि प्रधानमंत्री का इस्तीफा देश और अपने कर्तव्य के प्रति उनकी गहरी प्रतिबद्धता के बारे में ही बताता है। ब्रेग्जिट समर्थक लीडसम को भी प्रधानमंत्री पद के दावेदारों में माना जा रहा है।

नया नेता चुनने के लिए कंजरवेटिव पार्टी के सांसद पहले उम्मीदवारों की संख्या छांटते हुए इन्हें दो तक सीमित करेंगे। फिर वे नेता का फैसला पार्टी के 1,20,000 सदस्यों पर छोड़ देंगे। अगले महीने तक नए नेता चुन लिए जाने की उम्मीद है। इस तरह नए प्रधानमंत्री के पास ब्रेग्जिट को अमली जामा पहनाने के लिए बहुत कम समय रहेगा। यह देखना होगा कि इतने कम समय में वह मे द्वारा तैयार समझौते को किस तरह नया रूप देते हैं, और यह भी कि अगर वह भी विफल हो जाता है, तो फिर उनके पास क्या विकल्प रहेंगे। एक मुश्किल यह भी है कि इस बीच यूरोपीय संघ में नेतृत्व परिवर्तन होगा। जाहिर है कि टेरीजा मे के उत्तराधिकारी के लिए चुनौती केवल संसद में नहीं रहेगी, बल्कि बुरी तरह से विभाजित कंजरवेटिव पार्टी को एकजुट करना भी उसके लिए बड़ी परीक्षा होगा।

विचारधारा विहीन राजनीति का अंत

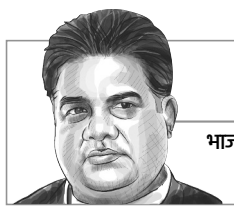

भूपेन्द्र यादव
भाजपा के राष्ट्रीय महामंत्री एवं राज्यसभा सदस्य

चुनाव परिणाम आने के बाद देश की राजनीति में बड़े परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में चुनाव पूर्व बना सपा-बसपा का महागठबंधन टूट गया। हालांकि यह गठबंधन टिकने वाला नहीं है, इसको लेकर चुनाव से पहले ही सभी को अंदाजा था। हालांकि हार का ठीकरा सपा के माथे फोड़ते हुए गठबंधन से अलग होने का निर्णय बसपा ने एकतरफा लिया है। बसपा सुप्रीमो का यह निर्णय दर्शाता है कि विपक्ष की राजनीति समाज में होने वाले परिवर्तन के मूल मुद्दों एवं विचारों से भटक गई है। विचारधारा की अस्पष्टता और दृष्टिकोण में असमानता के साथ जब राजनीतिक गठबंधन सिर्फ सत्ता के अवसरवाद में बनते हैं, तो उनका स्वाभाविक हश्र कुछ इसी तरह का होता है।

भारत की राजनीति को लंबे समय तक प्रभावित करने वाले नेताओं में बाबा साहेब आंबेडकर, डॉ राममनोहर लोहिया और पंडित दीन दयाल उपाध्याय प्रमुख हैं। लोहिया ने राजनीति में सप्तक्रांति का विचार दिया। यह सामाजिक परिवर्तन एवं सुधारों के बुनियादी आवश्यकताओं को परिभाषित करने वाले बिंदु की तरह है। सप्तक्रांति की बात करते हुए डॉ. लोहिया ने लैंगिक भेदभाव से मुक्ति तथा स्त्री-पुरुष समानता की जरूरत पर बल दिया। उन्होंने राजकीय, आर्थिक और मानसिक स्तर पर भेदभाव से मुक्त होने की जरूरत का विचार दिया है। सप्तक्रांति के विचारों में जन्मजात रूप से जातिगत पिछड़ापन को सामाजिक समस्या के रूप में चिह्नित करते हुए, इसके निराकरण की बात की गई है। पैदावार बढ़ाने, पूंजीगत विषमता, आर्थिक असमानता आदि विषयों को डॉ. लोहिया ने अपने विचारों में सही ढंग से रेखांकित किया है।

लोहिया और आंबेडकर के नाम पर राजनीति करने वाले अवसरवादी दलों का आचरण उनके विचारों से ठीक उलट है। यही कारण है कि सपा के वर्तमान अध्यक्ष लोहिया की वैचारिक विरासत तो दूर, अपने पिता की राजनीतिक विरासत को भी नहीं सहेज पाए।

इन विचारों के जरिये लोहिया की दृष्टि समाज के वंचित और गरीब को न्याय दिलाकर समाज और राजनीति की मुख्यधारा में शामिल करने की थी। किंतु वर्तमान में लोहिया और आंबेडकर के नाम पर राजनीति करने वाले ऐसे अवसरवादी दलों का आचरण उनके विचारों से ठीक उलट है। यही कारण है कि सपा के वर्तमान अध्यक्ष राम मनोहर लोहिया की वैचारिक विरासत तो दूर, अपने पिता की राजनीतिक विरासत को भी नहीं सहेज पाए।

यह भी सच है कि राजनीति को केवल किसी एक व्यक्ति या परिवार के सत्ता हितों का साधन बनाकर एक उपकरण की तरह इस्तेमाल करने की इजाजत अब देश की जनता नहीं देने वाली। महागठबंधन में हुए हालिया घटनाक्रमों में निहित राजनीति ने सिद्ध किया है कि बसपा सुप्रीमो ने खुद को एक जातिवादी अहंकार में कैद कर लिया था और अब भी वह उस अहंकार से खुद को उबार नहीं पा रहीं। बाबा साहब ने उच्च नैतिकता का चुनाव करते हुए सार्वजनिक जीवन जिया, जिसे बसपा प्रमुख ने कभी नहीं अपनाया। मैं मानता हूं कि अनुसूचित जाति के समाज की जो बड़ी समस्याएं हैं, उनसे जुड़ा जो चिंतन है, युवाओं की आकांक्षाएं है, उसको भी दरकिनार करने का काम बसपा ने अपनी संकीर्ण राजनीति के कारण किया है।

एक बात और गौर करनी होगी कि चुनाव परिणामों का सटीक आकलन कर पाने में अनेक राजनीतिक विश्लेषक इसलिए चूक गए, क्योंकि उन्होंने इस चुनाव को गठबंधनों के वोट-ट्रांसफर का चुनाव मानकर आकलन किया। जबकि यह चुनाव वोट ट्रांसफर का चुनाव नहीं था, ये नए भारत के निर्माण का चुनाव था। जब केंद्र में कोई सरकार बनती है अथवा केंद्र का चुनाव होता है तो देश की सुरक्षा, विदेश नीति, अर्थनीति जैसे मूल मुद्दों पर किसी भी दल का राजनीतिक चिंतन उभर कर आना चाहिए। विपक्ष ऐसे किसी भी चिंतन को रखने का प्रयास करता भी नहीं दिखा।

इसमें कोई संदेह नहीं कि विचारधारा विहीन और राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों से विमुख होकर अगर राजनीति को हमने महज वोट ट्रांसफर के चुनाव में तब्दील कर लिया, तो ये राष्ट्र की नहीं बल्कि कबीलों की राजनीति बनकर रह जाएगी। लेकिन एक स्वस्थ एवं परिपक्व लोकतंत्र के रूप में देश ने डॉ राममनोहर लोहिया, बाबा साहेब आंबेडकर और दीन दयाल उपाध्याय जैसे विचारकों के चिंतन के अनुरूप गरीब आदमी को ताकत देने की राजनीति को इस देश में स्वीकार किया। यह भारत के लोकतंत्र के लिए उत्कर्ष का विषय है।

वैसे बेमेल गठबंधन में हाल तक रहे दलों की बौखलाहट से किसी को निराश होने की जरूरत नहीं है, क्योंकि आज भाजपा सरकार ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में देश के गरीबों को सम्मान से जीवन जीने का मार्ग दिखाया है और लगातार इस दिशा में कार्य कर रही है। लोग अपनी सहज सामाजिक परंपरा, अपनी वेश भूषा, खान-पान और रहन-सहन जैसी चीजों के साथ नए भारत की आकांक्षा के लिए आगे बढ़ सकते हैं, ये रास्ता भाजपा ने दिखाया है। वहीं विपक्षी दलों की बिखराव की राजनीति यह दिखाती है कि भारत की जनता द्वारा नकारी गई ताकतें अपना वोट ट्रांसफर न होने से हताश हैं। हर गरीब अब भारत निर्माण में अपनी भूमिका के साथ आगे बढ़ रहा है। राजनीति करते समय हमें महात्मा गांधी के उस ताबीज को याद करना चाहिए जो उन्होंने देश की दिशा देते हुए सत्तर साल पहले दिया था,'जब भी कोई निर्णय लो तो समाज के अंतिम व्यक्ति का भला कैसे हो सकता है, ये सोचकर निर्णय करो।'

क्या मोदी सबका विश्वास जीत पाएंगे?

भाजपा ने भावुक समर्थकों (जिनकी नजर में मोदी कोई गलत काम नहीं कर सकते) के मतों से और असंतुष्ट वर्गों (जिनकी नजर में मोदी ने अभी तक कुछ भी सही नहीं किया) के मतों से सरकार का गठन किया।

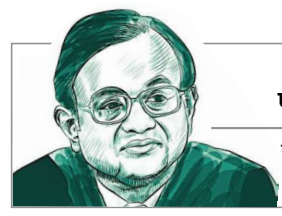

पी चिदंबरम
पूर्व केंद्रीय मंत्री

नरेंद्र मोदी को जो जनादेश मिला है, वह निर्विवाद रूप से बहुत व्यापक है। बेशक, अतीत में ऐसे मौके आए हैं, जब किसी एक राजनीतिक दल को लोकसभा चुनाव में 303 से अधिक सीटें मिली हों। मसलन, इंदिरा गांधी को 1980 में 353 और राजीव गांधी को 1984 में 415 सीटें मिली थीं। लेकिन उस समय की परिस्थितियां अलग थीं: इंदिरा गांधी ने एक अत्यंत अलोकप्रिय गठबंधन सरकार के खिलाफ बहादुरी से संघर्ष किया, जेल जाने सहित कई तरह के उत्पीड़न झेले और तकरीबन अकेले ही लोगों का समर्थन हासिल किया, जिन्होंने उनकी पार्टी को और खुद उन्हें (रायबरेली) पराजित कर दिया था। जहां तक राजीव गांधी की बात है, तो वह प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या से उपजी सहानुभूति की लहर पर सवार थे।

मतदाताओं का वृहत समर्थन

न केवल जीती गई सीटों की संख्या (303), बल्कि भाजपा ने जिस व्यापक तरीके से यह जीत हासिल की है, वह आश्चर्यजनक है। भाजपा सिर्फ तीन राज्यों- केरल, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश को ही भेद नहीं पाई। उसकी जीत का अंतर अविश्वसनीय तरीके से अधिक रहा, खासतौर से दो दलों के बीच होने वाले सीधे मुकाबले के पारंपरिक मानकों से भी बहुत अधिक। जैसा कि गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और असम में ऐसा मुकाबला था।

ऐसे कोई विश्वसनीय आंकड़े तो नहीं हैं, लेकिन सर्वेक्षणों और चुनाव ने पुष्टि की कि हिंदी भाषी और हिंदी जानने वाले प्रदेशों में उच्च जातियों ने बड़ी संख्या में भाजपा के पक्ष में मतदान किया। अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) के मामले में भी ऐसा ही रहा और आश्चर्यजनक रूप से दलितों, मुस्लिमों और ईसाइयों के एक वर्ग ने भी ऐसा ही प्रदर्शन किया। कारण भिन्न हो सकते हैं, लेकिन तथ्य यही है कि उन्होंने भाजपा को वोट दिया।

वोट मिला, भरोसा नहीं

मैं समझता हूं कि नरेंद्र मोदी खुश तो हैं, मगर संतुष्ट नहीं हैं। ऐसा कुछ जरूर है, जिस पर उन्होंने विचार किया है, संभवतः उनकी पार्टी के अन्य लोग जिसे समझ नहीं पाएः वह यह कि दलितों, मुस्लिमों, ईसाइयों और अत्यंत गरीब लोगों का सिर्फ वोट हासिल करना ही पर्याप्त नहीं है, जरूरत उनका भरोसा जीतने की है। वह जानते हैं कि अपने पहले कार्यकाल के अंत तक वह उनका भरोसा नहीं जीत पाए, इसलिए उन्होंने अपने पहले के नारे *सबका साथ, सबका विकास* में उन्होंने सबका विश्वास भी जोड़ दिया।

यह एक चतुर चाल है, लेकिन यह कठिनाइयों से भरी हुई है। कुछ स्वाभाविक बाधाओं के नाम हैं, गिरिराज सिंह, साध्वी निरंजन ज्योति और संजीव बालियान। कुछ अन्य लोग भी हैं, जो निर्वाचित तो हुए हैं, मगर जिन्हें किनारे कर दिया गया है या फिर जो प्रतीक्षा सूची में हैं- महेश शर्मा, अनंतकुमार हेगड़े, साक्षी महाराज, साध्वी प्रज्ञा सिंह ठाकुर और अन्य अज्ञात लोग। गिरिराज सिंह कैबिनेट मंत्री हैं और वह दो सहयोगी पार्टियों के नेताओं पर इफ्तार पार्टी में शामिल होने के कारण अवांछित टिप्पणी कर चुके हैं। भाजपा अध्यक्ष ने उन्हें फटकार भी लगाई, लेकिन उन्होंने कोई अफसोस नहीं जताया। चुनाव जीतने के बाद साक्षी महाराज एक कैदी (2017 में देश को झकझोर कर रख देने वाली उन्नाव में हुई बलात्कार की घटना के आरोपी विधायक) का शुक्रिया अदा करने के लिए जेल में उनसे मिलने गए। उन्हें अब तक फटकार नहीं लगाई गई है। उन पूर्वाग्रहों से छुटकारा पाना आसान नहीं है, जो बचपन या युवावस्था में रोपे जाते हैं। आरएसएस और भाजपा के वरिष्ठ नेता जब समय-समय पर ऐसे पूर्वाग्रह ('ईद में बिजली और दीपावली में बिजली नहीं', ऐसा क्षेत्र जहां अल्पसंख्यक बहुसंख्यक हैं) व्यक्त करते हैं, तब तो यह और भी मुश्किल हो जाता है। दलितों और मुस्लिमों की भीड़ द्वारा हत्या नहीं रुकेगी तो कोई मदद नहीं मिलेगी। तकरीबन हर हफ्ते कम से कम ऐसी एक घटना होती है। यदि भाजपा के 303 निर्वाचित सदस्यों में सिर्फ एक सांसद मुस्लिम समुदाय से है, तो इससे भी धारणा बदलने में मदद नहीं मिलने वाली है।

भय और कल्याण

एक और भयावह संकट है। भाजपा इन वर्गों का विश्वास जीत सकती है, यदि वह दो शर्तों को पूरा कर दे। पहली यह कि किसी को भी भय के साथ जीवन न जीना पड़े। दूसरी शर्त यह है कि उनकी आर्थिक स्थिति क्रमशः बेहतर होती जाए। आज ये दोनों शर्तें पूरी नहीं हुई हैं और यह देखना दिलचस्प होगा कि सरकार कैसे इन दो शर्तों को पूरा करती है।

कुछ वर्गों के लोगों के मन से भय दूर करने के लिए साहसिक कदम उठाने की जरूरत होगी। जब कभी अपराध कर दंड से बच निकलने का प्रयास हो, तो इसके लिए जवाबदेह लोगों को दंडित किया जाए। क्या भाजपा नेतृत्व दंडमुक्ति के भाव से ऐसे कृत्यों को अंजाम देने और भय फैलाने वालों को दंडित करेगा? यह एक बड़ा सवाल है, मौजूदा हालात में इसकी संभावना नहीं लगती है, लेकिन मुझे उम्मीद है कि भाजपा का नेतृत्व उन लोगों पर अपना अधिकार जताएगा जो दंडनीय व्यवहार में संलिप्त हैं।

दूसरी शर्त, वस्तुतः सरकार के पूरे नियंत्रण में नहीं है। वंचित तबकों की आर्थिक स्थिति तभी बेहतर होनी शुरू होगी, जब उन्हें और अधिक रोजगार मिले; और अधिक सुरक्षा मिले; उच्च आय हो और सार्वजनिक सामान और सेवा तक उनकी पहुंच बेहतर हो।

रोजगार और आय का संबंध उच्च और न्यायसंगत आर्थिक विकास से है और यह देखते हुए कि 2018-19 का अंत कैसे निराशाजनक रूप से हुआ, उच्च या न्यायसंगत विकास आसपास भी नजर नहीं आ रहा है।

मुझे संदेह है कि दलितों, मुस्लिमों, ईसाइयों और गरीबी की रेखा से नीचे गुजर बसर करने वाले वर्गों ने भाजपा उम्मीदवारों को सिर्फ इसलिए वोट दिया, क्योंकि कोई और अन्य उम्मीदवार चुनाव जीतने में सक्षम नहीं लग रहा था। यह वोट विवेक के आधार पर दिया गया, न कि विश्वास के कारण। भाजपा को उनका विश्वास जीतने के लिए बहुत कुछ करना होगा।

यह एक अप्रत्याशित स्थिति है। भाजपा ने भावुक समर्थकों (जिनकी नजर में मोदी कोई गलत काम नहीं कर सकते) के मतों से और असंतुष्ट वर्गों (जिनकी नजर में मोदी ने अभी तक कुछ भी सही नहीं किया) के मतों से सरकार का गठन किया।

यह देखना दिलचस्प होगा कि संसाधनों से लैस मोदी अनजाने समुद्र में कैसे अपनी नैया पार लगाते हैं।

Licensed by The Indian Express Limited

तपती धरती और कम होती छांव

जीवन की खुशहाली और सबके लिए राहत तो तभी संभव है, जब इस तपती भूमि पर बारिश हो। बारिश होने तक इंतजार ही कर सकते हैं।

■ विवेक कुमार मिश्र

आज पृथ्वी गरम हो रही है। यह एक दो दिन की नहीं, वर्षों से अति भौतिकता की ओर आंख बंद कर भागने का ही नतीजा है कि हम एक असहनीय गर्म प्रदेश के वासी होते जा रहे हैं। प्रकृति के चक्र में भारी परिवर्तन देखने को मिल रहा है। अचानक भारी बारिश होना, आंधी-तूफान सब मिलकर जीवन स्थितियों को मुश्किल में डाल रहे हैं। मौसम में यह भारी बदलाव अचानक नहीं हो रहा। इसके पीछे का सच यही है कि हम सब प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं। जब तक प्रकृति के पास सहज होकर समर्पण से नहीं जाएंगे, तब तक इस प्रक्रिया में किसी भी तरह का बदलाव होना संभव नहीं दिखता। कोई भी मौसम क्यों न हो, आज वह अपने रौद्र रूप में ही दिख रहा है। इसका बड़ा कारण हाल के वर्षों में जीवन शैली में आया बदलाव है। अभी गर्मी का मौसम है। स्वाभाविक है कि गर्मी पड़नी चाहिए। पर जब यह गर्मी असहनीय हो जाती है, तब सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि आखिर तवे की तरह जलती पृथ्वी का कारण क्या है। दो कदम चलते ही शरीर का सारा पानी निकल जाता है। चारों तरफ हाय! गर्मी करते लोग मिल जाएंगे। पंखे-कूलर में बैठे हैं, फिर भी चैन नहीं है। हो क्या गया है वातावरण को? कोई ग्लोबल वार्मिंग का नाम ले रहा है, तो कोई कुछ और। दरअसल हमने प्रकृति के साथ जीना छोड़ दिया है। यह सब इसी का परिणाम है। इस गर्मी को बढ़ाने में कोई और नहीं, हम सबकी जीवन शैली और अति सुविधाजीवी होने की बात छिपी है।

चारों तरफ बस कंकरीट का जंगल उगा रहे हैं। यांत्रिक होती सभ्यता और अबाध सुख भोग लेने की इच्छा ही पृथ्वी को गर्म कर रही है। सब बस भाग रहे हैं। गाड़ियों का रेला लगा है। सड़क पर दौड़ती गाड़ियां हमारे परिवेश को गर्म करने में मददगार हैं। इसी तरह घर में एसी की व्यवस्था से एक सीमित क्षेत्र तो ठंडा हो जाएगा, पर हमारा पूरा परिवेश तो गर्म ही होता जा रहा है। अति भौतिकता और अति यांत्रिकता को छोड़कर हमें प्रकृति की ओर जाना ही होगा। तभी जीवन की ओर भी चलना संभव होगा। अन्यथा तो यह धरती धू-धू कर तप रही है।

इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए हमें निजी तौर पर अपने आसपास एक हरियाली का परिसर बनाना ही होगा। जब तक हरा-भरा संसार नहीं होगा, तब तक सुकून नहीं होगा। हमारे पूर्वजों ने पेड़ लगाए, बाग-बगीचे लगाए, तालाब, कुएं, बावड़ी बनवाए और हम बहुमंजिली इमारतें बनवाने में व्यस्त हैं। पगडंडियों को छोड़कर फोर-लेन/सिक्स-लेन पर भाग रहे हैं। यह सब सुकून भरा तभी होगा, जब सड़क पर छायादार पेड़ हों, कुछ दूरी पर जल संचय के तालाब हों।

आदमी तो फिर भी अपने लिए छाया और राहत की जगह बना लेता है, सुविधाओं के संसार में चला जाता है, पर पशु-पक्षी एक अदद छाया और पानी की आस में भटकते रहते हैं। भले हैं वे लोग, जो सार्वजनिक स्थानों पर पीने के पानी की व्यवस्था कर देते हैं। हर आते-जाते आदमी को कम से कम इन गर्म हवाओं के बीच राहत का पानी मिल जाता है। इस समय हर कोई आते-जाते सबसे पहले अपने साथ पानी ही लेकर चलता है। यह इस बात का एहसास दिलाने के लिए काफी है कि हमारे चारों ओर जल की कमी होती जा रही है। जल का धीरे-धीरे उड़ जाना और छाया की कमी गर्मी के एहसास को बहुत ज्यादा बढ़ा देती है। कितना सुंदर होता है, जब हम किसी किनारे से अपार जलराशि को देखते हैं। इससे न केवल आंखों को सुकून मिलता है, बल्कि ठंडक और राहत भी मिलती है। पेड़ की सघन छाया में गर्मी का एहसास नहीं होता, वहीं जलराशि की ओर से उठती हवाएं तरावट लेकर आती हैं। इसी जलराशि, बाग-बगीचे के बीच आम लोगों से लेकर जीव-जंतु सभी का दिन निकल जाता है। कोई भी हैरान-परेशान नहीं दिखता। पर आज इस तरह के दृश्य कम होते जा रहे हैं। इसलिए घर से कदम निकालते ही गर्मी का एहसास चिंता में डाल देता है। लगातार ये खबरें आ रही हैं कि सारे तालाब- बांध के पानी उड़ते जा रहे हैं। कम होते जा रहे हैं। छोटे तालाब-पोखर तो कब के सूख गए। कहीं दूर किसी गड्ढे में चिलकता हुआ पानी दिखता है। कुएं-तालाब सब तो सूख रहे हैं। लगातार धरती का पानी कम ही तो हो रहा है। आंखों को सुकून देने वाली विशाल जलराशि न जाने कहां खो गई है। इसी तरह सघन जंगल की छाया भी दूर की बात हो गई ।

दिन- प्रतिदिन पुराने पेड़ गिरते जा रहे हैं और नए उनकी जगह नहीं ले पा रहे हैं। जंगल , बाग-बगीचे, पेड़ और हरियाली धीरे-धीरे कम होती जा रही है। जो बची हुई भूमि है, वह खाली है। कोई छाया नहीं। यह तो बस तप रही है। आज यह स्थिति हो गई है कि सुबह से ही तेज चमकता सूर्य और ही तेज होता जा रहा है। सूर्य की गर्मी सबके सिर चढ़कर बोल रही है। आज पृथ्वी के गर्म होने का हाल यह है कि नंगे पांव पौधों को पानी पिलाने चला गया। फर्श पर तलवे इस तरह जल गए जैसे कि भट्ठी पर लाल गर्म लोहा रखा हो और गलती से पांव पड़ गया हो। घंटों तक पांव से जलन दूर नहीं हुई। आज यह सोचने की जरूरत है कि आखिर इस तपती धरती पर प्राणी कैसे रहेंगे? कैसे जीवन चलेगा? अब वह समय आ गया है कि सारे लोग मिलकर पेड़-पौधे लगाने के साथ जीवन जल की रक्षा में आगे आएं। मनुष्यता इस दिशा में एक लोक अभियान के रूप में कदम बढ़ाएगी, इतना विश्वास तो किया ही जाना चाहिए। जीवन की खुशहाली और सबके लिए राहत तो तभी संभव है, जब इस तपती भूमि पर बारिश हो। बारिश होने तक इंतजार ही कर सकते हैं।